# बिहार में समाजवादी आन्दोलन में रामवृक्ष बेनीपुरीजी का योगदान

**अशोक कुमार 'अमर'***

1917 ई० की रूसी क्रांति बीसवीं सदी की सबसे बड़ी घटना थी। इसने विचार की दुनिया को झकझोर कर रख दिया तथा विश्व के अनेक राष्ट्रों में उथल–पुथल मचा दी। शोषितों के संघर्ष के स्वरूप में परिवर्त्तन हुआ और उनका संघर्ष नए लक्ष्यों से जुड़ा। मार्क्सवाद–लेनिनवाद को आधार बनाकर हुई रूसी क्रांति ने विश्व के अधिकांश बुद्धिजीवियों के सोच की दिशा बदल दी। इस क्रांतिकारी विचारधारा के मूल्यों से बेनीपुरीजी भी गहरे रूप से प्रभावित हुए। रूसी क्रांति के चौदह साल बाद सन् 1931 में उन्होंने 'बिहार सोशलिस्ट पार्टी' की स्थापना की। 1937 ई० में एक प्रकार से इसी का विस्तार 'कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी' के रूप में हुआ। इस पार्टी को उन दिनों हिन्दी में 'अखिल भारतीय कांग्रेस साम्यवादी पार्टी' कहा जाता था। कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी और कम्युनिस्ट पार्टी के उद्देश्यों में समानता थी। कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी के लोग कांग्रेस में रहते हुए कांग्रेस के समझौतावादी नेतृत्व के विरोधी थे। गाँधीजी का सन् 1920 और 1930 का आंदोलन जिस तरह गतिरोध का शिकार हुआ, उससे कांग्रेस के भीतर क्रांतिकारी रूझानवाले लोग बुरी तरह क्षुब्ध हुए। देश में किसान–मजदूर संगठित हो रहे थे। लेकिन कांग्रेस नेतृत्व इस वर्ग के आंदोलन को क्रांतिकारी दिशा देने के विरूद्ध था। इन्हीं वजहों से कांग्रेस के भीतर कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी बनी, जिसका उद्देश्य कम्युनिस्ट पार्टी की तरह वर्ग–संघर्ष और स्वाधीनता के बाद किसान–मजदूर राज कायम करना था। डॉ० रामविलास शर्मा ने लिखा है –

''कांग्रेस के भीतर किसानों और मजदूरों की नई चेतना के प्रतिनिधि के रूप में एक नया दल उभरने लगा, जो कांग्रेस सोशलिस्ट कहलाया। इस दल के अतिरिक्त कम्युनिस्ट भी इस समय कांग्रेस के भीतर रहकर काम कर रहे थे। इस समय की महत्वपूर्ण बात यह है कि कम्युनिस्ट और कांग्रेस सोशलिस्ट, दोनों मिलकर काम कर उरहे थे, दोनों मार्क्सवाद को अपनी राजनीतिक कार्यवाही का आधार मानते थे और दोनों ही रूसी क्रांति और वहाँ के समाजवादी निर्माण के प्रबल समर्थक थे। उस समय के भारतीय इतिहास को समझने के लिए कांग्रेस सोशलिस्ट और कम्युनिस्टों के आपसी संबंधों को याद रखना जरूरी है।'[1]

बेनीपुरीजी ने रूसी क्रांति और वहाँ के समाजवादी निर्माण पर 1940–42 में दो अलग–अलग पुस्तकें लिखी। यहाँ तक कि 1939 में उन्होंने चीन में माओत्से तुंग के नेतृत्व में चलने वाले क्रांतिकारी संघर्ष पर भी पुस्तक लिखी। इसके साथ ही बेनीपुरीजी उन दिनों 'जनता' साप्ताहिक का भी सम्पादन किया। जो उन दिनों कांग्रेस सोशलिस्टों तथा किसान–सभा के नेतृत्व में चलाए जा रहे संघर्ष का मुख्य संवाहक था। इसके अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि बेनीपुरीजी ने देश को समाजवादी क्रांति के लिए तैयार करने में कितना महत्वपूर्ण योगदान किया। उनका यह योगदान विलक्षण इसलिए है क्योंकि उन्होंने समाजवादी व्यवस्था कायम करने के लिए सिर्फ लेखन ही नहीं किया, बल्कि आधार–क्षेत्रों में जाकर किसानों–मजदूरों को संगठित किया और इसके लिए जेल भी गए।

बेनीपुरीजी पेशेवर राजनीतिज्ञ नहीं थे। वे समाजवाद के आग्रही विचारक और साहित्यकार थे। राजनीति उनके बाह्य जीवन का हिस्सा नहीं, उनकी भावना का भी अंग थी। इसीलिए अपने दल के बिखराव से वे एक हद तक टूट गए थे। अपने शुरूआती दिनों को याद करते हुए बेनीपुरीजी लिखते हैं–''भूँजा फाँकते हुए एक ऐसे समाज की कल्पना करना, जिसमें घी–दूध की नदियाँ बहेंगी और उस समाज के निर्माण के लिए अपने को उत्सर्ग करना अपने को खपाना, गलाना–आह! कैसे वे दिन थे![2] आगे वे लिखते हैं–''मैं कैसे समाजवाद छोड़ सकता हूँ? समाजवाद मैंने अनुभवों से ग्रहण किया है, उसमें आपबीती समाई हुई है, मेरे आसपास जो लोग रहे या हैं उनकी पीड़ा पिरोई हुई है! और स्पष्ट कहूँ उसमें घृणा का पुट भी कम नहीं है। जब मैं किसी मूर्ख और दुराचारी को केवल पैतृक धन के बल पर या भ्रष्टाचार के बल पर मौज करते देखता हूँ, गुलछर्रे उड़ाते देखता हूँ, तो मेरा खून खौल उठता है–घृणा से मैं लबालब हो उठता हूँ। ठीक उसी घृणा से, जिस घृणा से मैं कोढ़ी को देखता हूँ। किन्तु कोढ़ी को देखकर जहाँ घृणा दया बन जाती है, ऐसे लोगों को देखकर, वह गुस्सा बन उठती है– इच्छा होती है, दो घूसे उसके ऐन चेहरे पर जमा दूँ– उसके होठों से, नाक से खून गिरे और आनंद से देखूँ! यदि ऐसा नहीं करता हूँ, अब तक एक बार भी नहीं किया तो इसलिए कि इतनी अक्ल मुझमें है कि इसकी व्यर्थता को समझ सकूँ। यह सामाजिक रोग है, इसका सामाजिक इलाज ही हो सकता है। सामाजिक प्रयत्न इसके लिए आवश्यक है और जब तक उस प्रयत्न में लगा हूँ, तब तक मैं अपने को समाजवादी समझूँगा। मेरे समाजवाद की आधारशिला है घृणा, घोर–घृणा! गरीबी से घृणा–जो प्रतिभा को पीसती है, गरीबी से भी तब घृणा, जब वे अत्याचार के खिलाफ नहीं उठते, धनियों से घृणा, जो बाप–दादों की कमाई पर या नाना तिकड़मों से गरीबी का खून चूसकर जीते हैं, जो कमाते नहीं, सिर्फ खाते हैं,सिर्फ अन्न नहीं, बहुत लोगों के कलेजे भी! समाज से भी घृणा, जो ऐसी चीजें बरदाश्त करती हैं और सरकार से तो घोर घृणा, जो ऐसी चीजों की रक्षा के लिए ही रची जाती है।[3]

बेनीपुरीजी अपने समाजवादी उद्देश्य को स्पष्ट करते हुए लिखते हैं–''हमने बिहार सोशलिष्ट पार्टी की स्थापना की। उन दिनों एक ही ऐसी पार्टी थी, पंजाब

***इतिहास विभाग, ल०न०मि०वि० दरभंगा**

सोशलिष्ट पार्टी, जिसकी सूचनाएँ आदि लाला लाजपत रायजी के 'पिपुल' में छपा करती थी। किन्तु हमने अपनी पार्टी की विशेषता रखी थी, जो कांग्रेस के सदस्य हों, वही इस पार्टी के सदस्य हो सकते थे और उनके लिए सदा खादी का ही व्यवहार करना और अपने को जाति–पाति के भेदभाव से बिल्कुल अलग रखना अनिवार्य शर्त्त थी। आज जब फिर खादी पर बल दिया जाता और हर राजनीतिक दल में जाति–पाति का बोलबाला होता हुआ देखता हूँ, सोचता हूँ, उन दिनों कितनी बड़ी दूरदर्शिता से हमने काम लिया था।[4] अर्थात उनके समाजवाद में जाति–पाति का कोई स्थान नहीं था। बेनीपुरीजी समाजवादी आन्दोलन के विस्तृत होने के कारण पर प्रकाश डालते हुए लिखते हैं–''जब मैं हजारीबाग में था, युवक राजबन्दियों में समाजवाद का प्रचार करता रहा, किन्तु मेरा मुख्य काम तो हुआ जब मैं दूसरी बार की जेल यात्रा में कैंप जेल भेज दिया गया। चार हजार कैदी थे, मुख्यतः युवक थे, देहातों से आए थे। उनके हृदय और मस्तिष्क में कोई मलिनता नहीं थी। किसी पूर्वधारणा से भी वे जकड़े हुए नहीं थे। अतः उनमें समाजवादी विचारधारा ने बहुत ही असर किया और एक प्रकार से कहा जा सकता है, बिहार में समाजवाद की नींव पटना कैंप जेल में ही पड़ी। वहीं वे 'कैडर' तैयार हुए, जो पीछे चलकर बिहार में समाजवाद के प्रचारक, योद्धा और नायक सिद्ध हुए। हमने चुप–चोरी वहाँ समाजवाद पर कई पुस्तकें भी मँगा ली थी और बाजाब्ता अध्ययन केन्द्र भी चलाते थे। इस काम में हमें एक जेल कर्मचारी ने बहुत मदद की थी जिनके अहसानों को हम कभी भूल नहीं सकते। मैंने वही 'कम्युनिस्ट मैनिफेस्टों' का अनुवाद किया था। दूसरों को तो समाजवाद का ज्ञान कराया ही, स्वंय मैंने समाजवाद के सिद्धांतो का अध्ययन वहीं किया। जेल अधिकारियों से मिलकर वहीं हम एक राजबंदी विद्यालय चलाते थे, जिनमें पाँच सौ विद्यार्थी बाजाब्ता अध्ययन करते थे। उस विद्यालय का आचार्य मैं ही था। उस विद्यालय के कारण भी समाजवादी विचारधारा का बहुत प्रचार हुआ। आज भी जब कभी उन लोगों से, जो उस विद्यालय के विद्यार्थी थे, घोर देहात में भी भेंट होती है, वे उन दिनों की याद दिलाते हैं और अपने पुराने आचार्य के प्रति हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करते हैं।[5] बेनीपुरीजी समाजवाद और पूंजीवाद को स्पष्ट करते हुए कहते हैं– ''कम्युनिस्ट मैनिफेस्टो'यदि समाजवाद का 'गीता' है तो 'कैपिटल' उसका 'महाभारत'। भारतीय समाज के उद्‌भव और विकास का चित्र देखना हो, तो आप महाभारत पढ़िए। पूंजीवादी समाज की उत्पत्ति और विकास समझना है तो 'कैपिटल' देखिए। किन्तु 'कैपिटल' में पूंजीवादी समाज की विवेचना–मात्र ही नहीं है, उससे पैदा होनेवाले समाजवादी समाज की स्पष्ट झलक भी आप उसमें देख सकते हैं।[6] बेनीपुरीजी भारतीय पूंजीवाद के संबंध में लिखते हैं–''भारतीय पूंजीवाद जो एक राष्ट्रीयता के नाम पर अपनी थैली खोलता है, दूसरी ओर उद्योग–धंधे के विकास के नाम पर बड़े–बड़े कारखाने खोल देश के पैसे–पैसे को चूसने के लिए मूँह बाए रहता है। जो एक ओर बड़ी–बड़ी घरेलू उद्योग के प्रत्सोहन के नाम पर खुद चक्की चलाता



है, दूसरी ओर अपनी मशीनों की चक्की में मजदूरों को बेपनाह पीसता है, जो अहिंसा का पुजारी है, हिंसा का नाम सुनते ही काँप उठता है, किन्तु लड़ाई के जमाने में बड़े–बड़े ठेके लेकर भीषण नर–संहार में हँसते–हँसते हाथ बँटाता है। जो हमेशा दो घोड़ों पर सवार है–दो नावों पर सवार है। जिसका एक पैर साबरमति या सेवाग्राम में रहता है, तो दूसरा पैर वाइसरीगल लौज या व्हाइट हाऊस में। जो दो–दो मालिकों को एक साथ प्रसन्न रखना चाहता है जो त्याग और भोग का एक ऐसा चोंचो का मुरब्बा बनाता है कि देखनेवाले दंग रह जाएँ। जिसकी दो पोशाकें हैं, जिसकी दो भाषाएँ हैं और जो यथार्थतः दो–जीभा है–काला साँप![7]

बेनीपुरीजी का मानना था कि– ''यदि हमारा अंतिम उद्देश्य जनता को राजनीतिक और आर्थिक दासता से मुक्त करना है, उसे सम्पन्न और सुखी बनाना है, उसे शोषण के शिकंजों से छुटकारा दिलाना है, उसे विकास का अबाध अवसर देना है, तब समाजवाद को लक्ष्य बनाना ही है और सब किसी को उसके नजदीक आना ही है। फिर, यदि हमारा उद्देश्य समाज की उन शक्तियों पर काबू करना है जो परस्पर संघर्ष करती और गड़बड़ी पैदा करती रहती है और उन्हें इस तरह से संचालित करना है कि उनसे समाज का अधिक–से–अधिक कल्याण हो, तथा यदि हम मानवी बुद्धि की सभी चेतन प्रेरणाओं को समाज के सम्मिलित हित और वैभव की ओर प्रेरित करना चाहते हैं, तब भी हमारे लिए समाजवाद के निकट पहुँचना अनिवार्यतः आवश्यक हो जाता है।[8] आगे वे लिखते हैं– ''यदि हमारे यही उद्देश्य हैं तो इस पर बहस के लिए कोई गुंजायश नहीं कि हिंदोस्तान में भी समाजवाद की स्थापना होकर रहेगी। क्योंकि आखिर हिंदोस्तान में भी गरीबी है, एक तरफ भुखमरी है और दूसरी ओर दौलत और मौज है। हिंदोस्तान में भी शोषण है, यहाँ भी उत्पादन के सभी साधन कुछ व्यक्तियों के हाथों में है। संक्षेप में वर्त्तमान समाज के मूल रोग यानी आर्थिक और सामाजिक विषमता और उसके कारण हिंदोस्तान में भी मौजूद हैं, यहाँ भी एक मुट्ठी लोग ज्यादा से ज्यादा लोगों को चूस और दूह रहे हैं।[9] बेनीपुरीजी आर्थिक स्वतंत्रता के बिना समाजवाद की कल्पना को निरर्थक मानते हैं–''हम समाजवादियों के सामने आर्थिक स्वतंत्रता का मानी एक शब्द में है–'समाजवाद'। समाजवाद के बिना आर्थिक स्वंतत्रता धोखे की टट्टी साबित होगी, झूठी कल्पना सिद्ध होगी।[10] अर्थात् दोनों एक–दूसरे का पूरक हैं। इस तरह बेनीपुरीजी समाजवाद को भारतीय आत्मा के रूप में स्वीकार किया।

**संदर्भ ग्रंथ :**

1. भारत में अंग्रेजी राज और मार्क्सवाद, भाग–1, पृ०–180
2. बेनीपुरी ग्रंथावली, खण्ड–4, पृ०–87
3. वही, पृ०–74 4. वही, पृ०–75 5. वही, पृ०–75–76
6. बेनीपुरी ग्रंथावली, खण्ड–5, पृ०–397
7. वही, पृ०–263 8. वही, पृ०–275 9.वही, पृ०–276
10. वही, पृ०–276